**ओ३म्**

**‘महर्षि दयानन्द, आर्य समाज और गुरूकुलीय शिक्षा’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महर्षि दयानन्द ने मुख्यतः वेद प्रचार के लिए ही आर्यसमाज की स्थापना की थी। यह बातें गौण हैं कि यह स्थापना कहां की गई या कब की गई थी। किसी संस्था के गठन का उद्देश्य ही महत्वपूर्ण होता है। इसका उत्तर महर्षि दयानन्द ने स्वयं आर्यसमाज के 10 नियमों में से तीसरे नियम में दिया है कि “**वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सभी आर्यों (सज्जन मनुष्यों) का परम धर्म है।”** महर्षि दयानन्द वेदों को ईश्वर प्रदत्त ज्ञान मानते थे जो सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को दिया गया था। चारों वेद ईश्वर की अपनी भाषा वैदिक संस्कृत में हैं। **वेदों का प्रचार करने के लिए सबसे पहले वेदों का अध्ययन आवश्यक है।** वेदों के अध्ययन के लिए वेदों की भाषा को जानना आवश्यक एवं अपरिहार्य है। बिना वैदिक संस्कृत को जाने वेदों का अध्ययन नहीं किया जा सकता और प्रचार तो तभी होगा जब हम वेदों को जानेंगे। यद्यपि महर्षि दयानन्द की कृपा से वेदों के हिन्दी भाष्य उपलब्ध हैं, अंग्रेजी व अन्य भाषाओं में भी वेदों के भाष्य व अनुवाद उपलब्ध है जिनसे लाभ उठाया जा सकता है परन्तु वेदों के विस्तृत व यथार्थ अर्थ तो वैदिक संस्कृत को जानकर व शुद्ध सात्विक व पवित्र जीवन बनाने के साथ योग, ध्यान व समाधि की अवस्था तक पहुंच कर ही जाने व प्राप्त किये जा सकते हैं।

**मनमोहन कुमार आर्य**

वेदों की भाषा वैदिक संस्कृत व इसके आर्ष व्याकरण को किसी पब्लिक स्कूल या अंग्रेजी को प्रधानता देने वाले स्कूल में पढ़कर नहीं जाना जा सकता। इसके लिए तो केवल गुरूकुलीय शिक्षा प्रणाली की ही आवश्यकता व अपेक्षा है। इसके लिए आवश्यक है कि गुरूकुल के आचार्य वैदिक भाषा संस्कृत की व्याकरण के समर्पित विद्वान हों और वैदिक साहित्य के भी अच्छे मनीषी हों। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों में गुरूकुल का पाठ्यक्रम भी निर्धारित किया हुआ है। **उनका यह मानना है कि संस्कृत विद्या को पढ़कर अनन्त आनन्द की उपलब्धि होती है। यह बात महर्षि दयानन्द ने स्वयं वेदों के यथार्थ स्वरूप को जानकर व वेदों के ज्ञान को प्राप्त कर स्वयं अनुभव की थी जिसका उल्लेख उन्होंने किया है।** अतः संस्कृत भाषा की महत्ता निर्विवाद है और यह भाषा व इसका महत्व सृष्टि की प्रलय तक बना रहेगा। संस्कृत व्याकरण के ज्ञान के लिए ब्रह्मचारियों व विद्यार्थियों को नगर व ग्राम से दूर एकान्त स्थान में आचार्य वा गुरू के सान्निध्य में जाकर अध्ययन करना होगा। व्याकरण का ज्ञान प्राप्त होने पर महर्षि दयानन्द द्वारा निर्देशित पद्धति से अन्य ग्रन्थों को भी पढ़ना होगा जिससे ब्रह्मचारी वेदों व अन्य शास्त्रों के ज्ञान में निपुण होकर देश देशान्तर में वेदों का प्रचार कर सके। यह प्रचार कुछ इस प्रकार का होगा जैसा कि स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरूदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, स्वामी दर्शनानन्द, ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, मेहता जैमिनी, पं. युधिष्ठिर मीमांसक या पं. विजयपाल आदि ने किया था। क्या यह कार्य इतर शिक्षा प्रणालियों द्वारा सम्भव है? हमारा विश्वास है कि यह अन्य किसी प्रणाली द्वारा सम्भव नहीं है। अन्य शिक्षा प्रणालियों में अन्य अन्य विषयों का अध्ययन कर हिन्दी व अंग्रेजी की सहायता से वैदिक साहित्य के कुछ ग्रन्थों के अनुवाद को पढ़कर किंचित ज्ञान तो प्राप्त किया जा सकता है परन्तु वैदिक शास्त्रों का जो अधिकारिक ज्ञान संस्कृत पढ़कर व इसके मूल ग्रन्थों के अध्ययन से होता है वह अनुवादों व भाष्यों को पढ़कर होना सम्भव नहीं होता। इस लिए गुरूकुलों का महत्व निर्विवाद है और महर्षि दयानन्द व आर्यसमाज के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए गुरूकुल शिक्षा प्रणाली द्वारा संस्कृत व्याकरण एवं शास्त्रों के अध्ययन का महत्व व उसका योगदान निर्विवाद है।

कई बार कई लोगों के गुरूकुल के स्नातकों के साथ अच्छे अनुभव नहीं होते। उन आपत्तियों में प्रायः पुरोहितों द्वारा विवाहादि संस्कारों के अवसरों पर मांगी जाने वाली अधिक दक्षिणा व गुरूकुल के आचार्यों व ब्रह्मचारियों द्वारा प्रवचन व उपदेश आदि के लिए मार्ग व्यय, आवास व भोजनादि व्यय और उपदेश हेतु दक्षिणा का लिया जाना होता है। यह भी आपत्ति की गई है कि आर्यसमाज के बड़े बड़े गुरूकुल प्रणाली से पठित विद्वान जो विद्यालयों में लगभग एक लाख व अधिक वेतन प्राप्त करते हैं, वह भी बिना दक्षिणा के आधे घंटे का उपदेश, प्रवचन या भाषण नहीं दे सकते। हमें लगता है कि इस प्रकार की जो भी आपत्तियां की जाती हैं वह कुछ व अनेक मामलों में ठीक हो सकती हैं। परन्तु यह दोष हमारे पुरोहितों व विद्वानों का व्यक्ति दोष है, इसके लिए गुरूकुल प्रणाली दोषी नहीं है। हां, गुरूकुलों को इस बात पर विचार अवश्य करना चाहिये और यदि ब्रह्मचारियों या भावी पुरोहितों व विद्वानों को भविष्य में इस दोष से ग्रसित होने से बचाया जा सकता है, तो उसका समाधान ढूंढना चाहिये। इसके विपरीत हमें गुरूकुल शिक्षा में दीक्षित ऐसे महानुभाव विद्वान व पुरोहित आदि मिले हैं जिनका जीवन इन आपित्तयों के सर्वथा विपरीत विद्वता, परोपकार, सेवा व दूसरों के मार्ग दर्शन का रहा है। हम समझते हैं कि ऐसे गुरूकुल शिक्षा में दीक्षित लोगों की कमी नहीं है। किसी एक व कुछ लोगों के कारण पूरी शिक्षा प्रणाली को गलत ठहराना व अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम वाले स्कूलों जहां अध्यापक मांसाहारी हों, प्रकट या छुप कर धूम्रपान करते हों, जिन विद्यालयों में अध्यापकों को पर्याप्त वेतन न दिया जाता हों, जहां के अध्यापक आर्य विचारों व आचरण वाले न हों तथा जहां विद्यालयों द्वारा मोटी मोटी रकमें फीस के रूप में ली जाती हैं, वह चाहे स्वयं को आर्य विद्यालय कहें अथवा उनके नाम के साथ किसी भी रूप में स्वामी दयानन्द जी का नाम जुड़ा हो, उस शिक्षा प्रणाली व व्यवस्था को अच्छा नहीं कहा जा सकता। यह तो गुरूकुलीय शिक्षा से भी अधिक दोषपूर्ण हमें दीखती है। जिस शिक्षा में विद्यार्थियों को वेदों एवं वैदिक साहित्य सहित सन्ध्या, ईश्वरोपासना, यज्ञ आदि सहित ईश्वर, जीव व प्रकृति आदि आध्यात्मिक विषयों का ज्ञान न दिया जाये, हमें लगता है कि शिक्षा आधी अधूरी व आर्यसमाज के लिए हितकर नहीं है। ऐसे शिक्षा केन्द्रों से दीक्षित व्यक्ति तो भौतिकवादी जीवन शैली के अग्रगामी ही होंगे, देश व समाज को उनसे कोई विशेष लाभ होता नहीं दीखता है।

हम आज की परिस्थितियों में यह भी अनुभव करते हैं कि प्रत्येक आर्यसमाज का पुरोहित वैदिक संस्कृत व्याकरण का आचार्य होना चाहिये और उसके द्वारा आर्यसमाज में संस्कृत शिक्षण का आयोजन अर्थात् संस्कृत पाठशाला का नियमित रूप से संचालन होना चाहिये जिससे आर्यसमाज से जुड़े सभी अधिकारी, सभासद, सदस्य व स्थानीय संस्कृत प्रेमी संस्कृत का अध्ययन कर सकें। हम यह भी अनुभव करते हैं कि आर्य समाज के प्रधान व मंत्री सहित सभी पदाधिकारी एवं सभासद् संस्कृत भाषा व इसके साहित्य से सुपरिचित एवं विद्वान होने चाहिए। प्रधान व मंत्री के लिए तो संस्कृत का ज्ञान होना अनिवार्य भी होना चाहिये। इस कार्य को करने वाले आचार्य व पुरोहित को समय के अनुसार उचित वेतन का प्रबन्ध भी होना चाहिये अन्यथा कोई भी आचार्य रूचि पूर्वक अध्ययन शायद् ही करायेगा। ऐसा होने पर ही आर्यसमाज का प्रचार व प्रसार आशा के अनुरूप नहीं हो सकेगा।

वेद एवं वैदिक साहित्य आर्यसमाज रूपी शरीर की आत्मा है वहीं गुरूकुल शिक्षा प्रणाली इस शरीर और आत्मा की श्वसन प्रणाली है। इसी कारण महर्षि दयानन्द जी ने अपने जीवनकाल में संस्कृत की अनेक पाठशालायें खोली थी। यदि शरीर में आत्मा न हो और उसकी श्वसन प्रणाली ठीक काम न करे तो शरीर कोई इच्छित फलोत्पादक कार्य नहीं कर सकता। अतः गुरूकुल शिक्षा पद्धति का वेदों के प्रचार व प्रसार में महत्व निर्विवाद एवं अपरिहार्य है। हां, यदि गुरूकुल शिक्षा प्रणाली में देश-काल-परिस्थितियों वश कोई दोष आ गए हैं, तो उनका निराकरण हमारे गुरूकुलीय शिक्षा पद्धति से जुड़े आचार्यों व संचालकों को अवश्य करना चाहिये।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001 / फोनः09412985121**